उत्पादन में 7.2 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई, वहां आधारभूत ढांचागत क्षेत्रों में उत्पादन क्षमता का संतोषजनक विस्तार नहीं हुआ। बिजली, गैस, रेल यातायात तथा अन्य परिवहन क्षेत्रों में अपेक्षित निवेश न होने से आधारभूत ढांचे का उतना विकास नहीं हुआ जिसके आधार पर नौवीं पंचवर्षीय योजना में आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया को तेज रख पाना संभव होता।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में आठवीं पंचवर्षीय योजना की उपलब्धि और उदारीकरण से अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर सकल घरेलू उत्पाद की संवृद्धि दर का लक्ष्य 6.5 प्रतिशत वार्षिक निर्धारित किया गया परन्तु उपलब्धि 5.3 प्रतिशत वार्षिक ही रही। योजना आयोग के अनुसार इस असंतोषजनक निष्पादन के तीन प्रमुख कारण थे—(1) पांच में से तीन वर्षों में कृषि का निराशाजनक निष्पादन, (2) औद्योगिक वस्तुओं की मांग में कमी जिसके परिणामस्वरूप औद्योगिक संवृद्धि की दर कम रही, तथा (3) विश्व अर्थव्यवस्था में शिथिलता (slowdown) जिसका भारतीय निर्यातों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।[1] दसवीं पंचवर्षीय योजना में संवृद्धि का लक्ष्य 8.0 प्रतिशत प्रति वर्ष रखा गया जबकि उपलब्धि 7.8 प्रतिशत प्रति वर्ष रही। यदि हम योजना का पहला वर्ष (2002-03) छोड़ दें तो बाकी के चार वर्षों में आर्थिक संवृद्धि दर 8.7 प्रतिशत प्रति वर्ष प्राप्त होती है। यह चीन के बाद विश्व भर में दूसरी सबसे अधिक विकास दर थी। इससे सरकारी क्षेत्रों में काफी उत्साह पैदा हुआ तथा सरकार ने यह दावा किया कि 'अर्थव्यवस्था प्रभावी तौर पर उच्च संवृद्धि चरण में पहुँच गई है।'[2] इससे प्रोत्साहित होकर सरकार ने ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में 9 प्रतिशत प्रति वर्ष का संवृद्धि लक्ष्य निर्धारित किया। योजना के प्रथम वर्ष 2007-08 में संवृद्धि दर 9.2 प्रतिशत रही परन्तु दूसरे वर्ष 2008-09 में विश्वव्यापी मंदी के परिणामस्वरूप आई आर्थिक शिथिलता के कारण संवृद्धि दर गिरकर 6.7 प्रतिशत रह गई। 2009-10 में आर्थिक संवृद्धि दर 7.4 प्रतिशत रही।

आत्मनिर्भरता
(Self Reliance)

1951 में आर्थिक आयोजन की प्रक्रिया शुरू होने के समय भारत तीन दृष्टियों से दूसरे देशों पर निर्भर था। एक तो कृषि प्रधान देश होते हुए भी इसे खाद्यान्नों का आयात करना होता था। दूसरे, इस देश में आधारभूत उद्योगों का विकास लगभग न के बराबर होने की वजह से बड़ी मात्रा में परिवहन उपकरण, बिजली सम्बन्धी संयंत्र, मशीनी औजार, भारी इंजीनियरिंग वस्तुएं और दूसरे पूँजीगत पदार्थ विकसित देशों से आयात करने होते थे। तीसरे, देश में बचत स्तर नीचा होने के कारण निवेश के लिए काफी विदेशी सहायता लेना जरूरी था। जब कोई देश विशुद्ध व्यापारिक शर्तों पर आयात अथवा निर्यात करता है तो वह उसके हित में होता है। लेकिन अल्पविकसित देशों की स्थिति इस दृष्टि से भिन्न है। विकसित देश इन देशों को खाद्यान्न, मशीनें तथा पूँजीगत उपकरण बेचते समय अपनी मजबूत सौदाकारी (bargaining) शक्ति का प्रयोग करते हैं और प्रायः अनुचित रूप से ऊंची कीमतें वसूल करते हैं। वे इन चीजों के निर्यात को राजनीतिक दबाव के लिए भी इस्तेमाल करते हैं। **कोई भी देश यदि अपनी संवृद्धि प्रक्रिया को दूसरे देशों के प्रभाव से मुक्त रखना चाहता है तो उसे न केवल खाद्यान्नों और मशीनों तथा दूसरे उपकरणों की दृष्टि से आत्मनिर्भर बनना होगा, बल्कि विदेशी सहायता पर निर्भरता को भी कम करना होगा।**

मुख्य रूप से यही वे कारण थे जिनकी वजह से आत्मनिर्भरता को आर्थिक आयोजन का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य माना गया था। पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं में आत्मनिर्भरता पर स्पष्ट रूप से जोर नहीं दिया गया था। पहली बार तीसरी पंचवर्षीय योजना में यह स्पष्ट रूप से कहा गया कि देश निश्चित समय-अवधि में आत्मनिर्भरता का उद्देश्य प्राप्त करने की कोशिश करेगा। लेकिन इस योजना में आत्मनिर्भरता की परिभाषा संकुचित अर्थ में की गई। आत्मनिर्भरता को योजना आयोग ने विदेशी सहायता से मुक्ति के रूप में परिभाषित किया।

चौथी पंचवर्षीय योजना में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को ज्यादा ठोस रूप देने के साथ इसे प्राप्त करने का समय अधिक निश्चित रूप से तय किया गया। योजना के दस्तावेज में कहा गया कि विदेशी सहायता को कम किया जाएगा, निवल ऋण सेवा प्रभार (net debt servicing) जिसमें ब्याज का भुगतान शामिल है चौथी योजना खत्म होने के समय आधा रह जाएगा और उसके बाद कम से कम समय में उसे पूरी तरह समाप्त किया जा सकेगा। इसके अलावा दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य (long term perspective) में यह भी स्पष्ट किया गया कि 1980-81 तक देश को दृश्य (visible) और अदृश्य (invisible) निर्यातों और निजी पूंजी सौदों से विदेशी

1. Government of India, Planning Commission, *Tenth Five Year Plan 2002-07* (Delhi, 2003), Volume I, p. 24.
2. Government of India, *Economic Survey* 2007-08 (Delhi, 2008), p. 1.

विनिमय की इतनी प्राप्ति होगी कि आयात की जरूरतों और विदेशी ऋणों पर ब्याज के दायित्वों के भुगतान के लिए काफी हो। इस तरह योजना आयोग ने विश्वास प्रकट किया था कि ऋणों की अदायगी को छोड़कर अन्य किसी बात के लिए रियायती शर्तों पर ऋणों की जरूरत नहीं पड़ेगी। चौथी योजना के शुरू के चार वर्षों में इस दिशा में आशा के अनुकूल प्रगति हुई लेकिन योजना के आखिरी वर्ष के दो ऐसी बातें हुईं कि भुगतान सन्तुलन की स्थिति फिर गम्भीर हो गई। 1972-73 में देश में सूखा पड़ा और इसकी वजह से बड़ी मात्रा में खाद्यान्नों का आयात करना पड़ा। दूसरी बात यह हुई कि भारत द्वारा आयात की जाने वाली बहुत सारी वस्तुओं की अन्तर्राष्ट्रीय कीमतें तेजी के साथ बढ़ीं। इनमें पैट्रोलियम पदार्थ, इस्पात, अलौह धातुएं, उर्वरक और अखबारी कागज बहुत महत्वपूर्ण थीं। भारी ऋण-सेवा प्रभार (debt servicing charges) के साथ-साथ इस बढ़े हुए आयात बिल ने भुगतान सन्तुलन की स्थिति बहुत गंभीर बना दी। अतः पांचवीं पंचवर्षीय योजना में भुगतान सन्तुलन की स्थिति सुधारने के लिए निर्यात संवर्धन (export promotion) और आयात नियन्त्रण की दृष्टि से अनेक उपाय किये गए। योजना आयोग ने विश्वास प्रकट किया था कि इन उपायों से 1985-86 तक अर्थव्यवस्था लगभग आत्मनिर्भर हो जायेगी।

आत्मनिर्भरता को प्रावैगिक अर्थ देना (Dynamic meaning assigned to self-reliance)–योजना आयोग ने आत्मनिर्भरता को प्रावैगिक (dynamic) अर्थ प्रदान किया है। कोई भी देश यदि आर्थिक संवृद्धि के उद्देश्य को छोड़ने के लिए तैयार है तो उसे आत्मनिर्भर होने में कोई कठिनाई नहीं होगी। भारत में आर्थिक आयोजन का उद्देश्य तेजी के साथ विकास के साथ-साथ आत्मनिर्भरता के उद्देश्य को प्राप्त करना रहा है और यही कारण है कि इसे हासिल करना उतना आसान नहीं लगता। पाँचवीं योजना की अवधि में भुगतान सन्तुलन की स्थिति में काफी सुधार हुआ लेकिन उन उपायों की वजह से नहीं जिनकी व्यवस्था योजना में की गई थी। इस अवधि में मध्य पूर्व तथा अफ्रीका के बहुत सारे देशों में भारतीय श्रम की मांग बढ़ी और बड़ी संख्या में भारतीय वहां गए। उनके निजी प्रेषणों (private remittances) में भारी वृद्धि हुई। नतीजा यह हुआ कि जहां 1973-74 में भारत के कुल विदेशी विनिमय भंडार 736 मिलियन डालर के थे, वहां 1979-80 में 6,324 मिलियन डालर के हो गये।

1990-91 में सरकार द्वारा भुगतान सम्बन्धी स्थिति की उचित व्यवस्था कर सकने की क्षमता में संदेह उत्पन्न हो गया। इसलिए अल्पकालीन विदेशी ऋण मिलने कठिन हो गए। इसके फलस्वरूप विदेशी विनिमय भंडार 1990-91 में मात्र 2,236 मिलियन डालर रह गए। जुलाई 1991 में बिगड़ी हुई स्थिति को संभालने के लिए सरकार ने रुपये का अवमूल्यन किया। इसके अलावा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक से ऋणों की व्यवस्था की गई। सरकार का दावा है कि सुधार अवधि में स्थिति में सुधार हुआ है। इसका प्रमाण यह बताया जाता है कि मार्च 2008 के अन्त तक विदेशी विनिमय भंडार 309.7 बिलियन डालर तक पहुँच चुके थे।

आत्मनिर्भरता के क्षेत्र में उपलब्धियां (Achievements in the field of self-reliance)–**आर्थिक आयोजन के काल में आत्मनिर्भरता की दिशा में भारत की दो महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां हैं। एक तो भारत खाद्यान्नों की दृष्टि से लगभग आत्मनिर्भर हो गया है। दूसरे, देश में भारी इन्जीनियरिंग, मशीनी औजारों, लोहा-इस्पात तथा दूसरे पूंजीगत उद्योगों के भारी विकास से मशीन, संयंत्र और अन्य पूँजीगत उपकरणों के बारे में देश बहुत कुछ आत्मनिर्भर हो गया है।** इस समय भारत के निर्यातों में इन्जीनियरिंग वस्तुओं का प्रथम स्थान है। तात्पर्य यह है कि भारत का पूँजी आधार अब काफी मजबूत है। वह बड़े से बड़े उद्योगों की स्थापना अपने मशीनी और तकनीकी ज्ञान के आधार पर कर सकता है। यह आर्थिक आयोजन की एक बड़ी उपलब्धि है।

पूर्ण रोजगार
(Full Employment)

गरीबी दूर करने के लिए बेरोजगारी की समस्या हल होनी चाहिए। वास्तव में बेरोजगारों की बढ़ती हुई संख्या गरीबी के विस्तार का बड़ा कारण होती है। **इसलिए बेरोजगारी निवारण की चर्चा विभिन्न योजनाओं में की गई है और इसे भारत में आर्थिक आयोजन का उद्देश्य बताया गया है। लेकिन रोजगार कभी भी आर्थिक आयोजन के मुख्य उद्देश्य के रूप में स्वीकार नहीं किया गया। अशोक रुद्र के अनुसार तो सरकार की कभी कोई रोजगार नीति रही भी नहीं है।**[3] यही कारण है कि देश में आयोजन काल में कुल बेरोजगारी बढ़ी है। जनता सरकार द्वारा तैयार की गई पंचवर्षीय योजना 1978-83 में पहली बार रोजगार और आर्थिक संवृद्धि के बीच विरोध की सम्भावना को स्वीकार कर रोजगार को आर्थिक आयोजन का मुख्य उद्देश्य माना गया, लेकिन कांग्रेस के हाथ में सत्ता आने पर छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में आर्थिक संवृद्धि को फिर मुख्य उद्देश्य मानकर रोजगार की चर्चा एक गौण उद्देश्य के रूप में

3. Ashok Rudra, "Inequality and Economic Policy", in S.A. Shah (ed.), *India : Degradation and Development* (Secunderabad

की गई। सातवीं योजना में सरकार की नीति बदली और रोजगार बढ़ाने पर जोर दिया गया। आठवीं पंचवर्षीय योजना में सरकार ने रोजगार को प्राथमिकता देने की बात तो की लेकिन रोजगार सृजन के बारे में युक्ति (strategy) में ज्यादा गंभीरता नजर नहीं आई। नौवीं पंचवर्षीय योजना रोजगार की दृष्टि से आठवीं पंचवर्षीय योजना से भिन्न नहीं थी। दरअसल 1990 के दशक में उदारीकरण पर जोर रहा है और इसके फलस्वरूप रोजगार सृजन मुख्यतः बाजार की शक्तियों पर निर्भर है। इतना ही नहीं, अनेक क्षेत्रों में रोजगार में कटौती उदारीकरण के बाद के वर्षों में सरकारी नीति का हिस्सा रही है।

रोजगार के प्रति दृष्टिकोण (Approach to employment)–भारत में अब तक रोजगार के पहलू से कोई भी योजना तैयार नहीं की गई है। योजना आयोग का रोजगार के बारे में प्रायः दृष्टिकोण (approach) यह रहा है कि रोजगार के अवसरों में विस्तार के सवाल को निवेश के कार्यक्रमों से अलग नहीं देखा जा सकता। निवेश के साथ-साथ रोजगार भी बढ़ता है। तीसरी पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में योजना आयोग ने आर्थिक आयोजन के उद्देश्य की चर्चा करते हुए तर्क दिया था कि निवेश और विकास व्यय में वृद्धि करने से राष्ट्रीय आय बढ़ती है। इसके फलस्वरूप श्रम की मांग और रोजगार का विस्तार होता है। रोजगार के सम्बन्ध में इस दृष्टिकोण का सबसे बड़ा दोष यह है कि यह इस बात पर गौर नहीं करता कि भारी निवेश अपने आप रोजगार में विस्तार नहीं करते। **रोजगार के विस्तार के लिए यह बहुत जरूरी है कि निवेश में वृद्धि के साथ-साथ सही तकनीक अपनाई जाए।** यह तभी हो सकता है जब निवेश सम्बन्धी निर्णय लेने से पहले प्रत्येक निवेश परियोजना द्वारा रोजगार के अवसर पैदा करने की सम्भावना पर तकनीकी दृष्टि से विचार किया जाए। बेरोजगारी की समस्या पर समष्टि अर्थशास्त्रीय ढांचे (macro economic framework) में निर्णय लेने से काम नहीं चलेगा। यदि रोजगार का विस्तार करना है तो विभिन्न देशों, प्रदेशों और वर्गों के लिए रोजगार की आवश्यकताओं के संदर्भ में योजनाएं तैयार करनी होंगी। दसवीं योजना में कहा गया है कि श्रम की मांग में वृद्धि के लिए आर्थिक संवृद्धि की दर ऊंची होनी चाहिए लेकिन श्रमशक्ति में बढ़ने वाली मात्रा को रोजगार देने के लिए यह काफी नहीं है। अतः संवृद्धि में रोजगार के तत्व पर ध्यान देना जरूरी है।[4]

अपर्याप्त संख्या में रोजगार के नए अवसर (Inadequate fresh employment opportunities)– भारत में आर्थिक आयोजन में रोजगार के बारे में कितना गलत दृष्टिकोण था इसकी विस्तृत व्याख्या हमने अध्याय 10 में की है। हम यहां पर केवल इस बात पर जोर देना चाहेंगे कि **सरकार ने विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत उतने भी रोजगार के नए अवसर पैदा करने की कोशिश नहीं की जितने कि नए लोग श्रम-बाजार में आए।** नतीजा यह हुआ कि हर पंचवर्षीय योजना समाप्त होने पर बेरोजगारी की संख्या पहले की तुलना में अधिक हो गई। राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के 27वें दौर से प्राप्त तथ्यों पर आधारित अनुमान के अनुसार, 1972-73 में दैनिक स्थिति बेरोजगारी (daily status unemployment) कुल कार्यकारी जनसंख्या की 8.35 प्रतिशत थी। राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के 38वें दौर से उपलब्ध तथ्यों के आधार पर 1983 में दैनिक स्थिति बेरोजगारी का अनुपात 8.25 प्रतिशत था। 1972-73 और 1983 के इन बेरोजगारी अनुमानों में अन्तर इतना कम है कि यह मानना ठीक ही होगा कि 1972-73 और 1983 के बीच बेरोजगारी का स्तर स्थिर रूप से 8.3 प्रतिशत के आसपास था। लेकिन राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के 43वें दौर से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर 1987-88 में दैनिक स्थिति बेरोजगारी केवल 6.09 प्रतिशत थी। तात्पर्य यह है कि 1983 और 1987-88 के बीच के वर्षों में बेरोजगारी कुछ कम हुई। परन्तु जैसा हम अध्याय 10 में विस्तार के साथ लिख चुके हैं, 1972-73 से 1993-94 के बीच 21 वर्षों की अवधि में रोजगार लोच में बहुत गिरावट आई है जिसे देखते हुए यह संदेहजनक लगता है कि इस अवधि में बेरोजगारी में कोई कमी हुई हो। योजना आयोग का अनुमान है कि 1993-94 में श्रम-शक्ति का लगभग 2.02 प्रतिशत बेरोजगार था और 8.43 प्रतिशत के पास अपर्याप्त रोजगार था।[5] राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के 61वें दौर से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि 1993-94 और 2004-05 की अवधि में ग्रामीण पुरुषों में दैनिक स्थिति बेरोजगारी 5.6 प्रतिशत से बढ़कर 8.0 प्रतिशत हो गई। इसी तरह अन्य वर्गों (ग्रामीण महिलाओं, शहरी पुरुषों तथा शहरी महिलाओं) में भी बेरोजगारी बढ़ी है (देखें अध्याय 10 की सारणी 10.6)। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में देश में रोजगार और बेरोजगारी के संबंध में अनुमान लगाने के लिए अधिकांशतः दैनिक स्थिति के आधार का प्रयोग किया गया है। इस आधार पर **बेरोजगारी की दर 1993-94 में 6.06 प्रतिशत थी जो 2004-05 में बढ़कर 8.28 प्रतिशत हो गई। इसी अवधि में बेरोजगारों की संख्या 2 करोड़ 3 लाख से बढ़कर 2 करोड़ 47 लाख हो गई।**[6]

4. Government of India, Planning Commission, *Tenth Five Year Plan 2002-2007* Volume I, (Delhi, 2003)p. 146
5. Government of India, Planning Commission *Ninth Five Year Plan 1997-2002,* Volume 1, (Delhi, 1999) Table 415, p. 198.
6. Government of India *Economic Survey 2007-08* (New Delhi, 2008), Table 10.9, p. 247.